शब्द स्पर्शन

काव्य संग्रह

अनुराग श्रीवास्तव 'मलय'

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

छायाचित्र- अप्रतिम श्रीवास्तव

शब्द स्पर्शन

काव्य संग्रह

अनुराग श्रीवास्तव ‘मलय’

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN - " 978-93-5372-051-3"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

संपादक- प्रीति समकित सुराना

तकनीकी संपादक एवं मिडिया प्रभारी - संदीप कुमार सोनी

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) ४८१३३१

दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५६

मोबाईल- ६४२४७६५२५६

अणुडाक - antrashabdshakti@gmail.com

अंतरताना - www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण - २०१६, **अनुराग श्रीवास्तव**

आवरण चित्र - **संदीप सोनी, वारासिवनी**

मूल्य - ६०.०० रूपये

मूद्रक- **शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी**

SHABD SPARSHAN BY ANURAG SHRIVASTAVA 'MALAY'

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में आविा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

भूमिका

हिन्दी कविताओं के प्रति मेरी रुचि मुझे बाल्यकाल में मिले साहित्यिक परिवेश का परिणाम है जिसके संभवतः दो कारण थे। पहला कारण मुझे मेरे बाबा (दादाजी) स्व. श्री राम लखन लाल जी का वात्सल्यपूर्ण सानिध्य प्राप्त होना था। उन्होंने मुझे हर दिन डायरी में एक अच्छी कविता या एक अच्छा विचार लिखने की आदत डालने के लिए प्रेरित किया और मुझे मात्र छः वर्ष की आयु में हिन्दी तथा भोजपुरी के विशिष्ट कवि 'मोती बी. ए.' जी की तीन पन्नों की 'लाचारी' कविता कंठस्थ करवा दी। दूसरा कारण संभवतः यह रहा कि मैं कक्षा पाँचवीं तक सरस्वती शिशु मंदिर का छात्र रहा जहाँ प्रत्येक शनिवार को विद्यालय प्रांगण में आयोजित होने वाली बालसभाओं में मेरे अध्यापकों (जिन्हें मैं 'आचार्य जी' व 'बहन जी' कहता था) द्वारा मुझे मंच पर जाकर कुछ सुनाने को लगभग जबरन प्रेरित/विवश किया जाता था। उन लोगों का यह व्यवहार उस समय मेरे मन में उत्पन्न क्रोध व खिन्नता का कारण था किन्तु आज मैं स्वयं को उन सबका कृतज्ञ मानता हूँ।

इसके अतिरिक्त घर पर प्रतिवर्ष रामचरितमानस के अखंड पाठ की परंपरा ने भी मेरी चेतना में साहित्य के प्रति अनुराग का भरपूर पोषण किया। बहरहाल, कविताओं में रुचि उत्पन्न हो गई। कविताएं पढ़ना और सुनना अच्छा लगने लगा। दसवीं कक्षा में हिन्दी की पाठ्यपुस्तक में दिनकर जी की कविता 'मनुष्य और सर्प' और तत्पश्चात 'रश्मिरथी' और 'मधुशाला' इत्यादि पुस्तकें पढ़कर अत्यंत प्रभावित हुआ। कई कविताओं का अर्थ बेशक न समझ आया हो पर शब्दों का तालमेल और तुकबंदी पढ़कर सुखद अनुभव होता था। कभी यह नहीं सोचा था कि मैं भी कविताएं लिख सकूँगा।

स्नातक में दिल्ली विश्वविद्यालय में दाखिला लिया जहाँ मेरी मुलाकात मेरे अज़ीज़ मित्र श्री अमरेश कुमार चतुर्वेदी जी से हुई जो एक शानदार कवि हैं। उनकी रचनाएँ पढ़कर बहुत प्रभावित हुआ और स्वयं भी कुछ लिखने की इच्छा मन में कहीं

सुगबुगाने लगी। प्रयास किया और अपनी प्रथम कविता 'मेरा देशप्रेम : व्यंग' अप्रैल २०१२ में लिखी। मैं अत्यंत उत्साहित था। मित्रों और परिजनों को वह कविता सुनायी, सभी ने सच्चे या झूठे मन से प्रशंसा की और तभी से एक नियमित अंतराल पर कविताएं लिखने का क्रम चल पड़ा।

'शब्दस्पर्शन' मेरा प्रथम काव्य संकलन है जिसके लिए मैं 'अंतरा शब्दशक्ति' का आभारी हूँ। इस संकलन का नामकरण एक कठिन समस्या थी क्योंकि मेरी कविताओं की विषयवस्तुओं में पर्याप्त वैविध्य था और कोई ऐसा नाम नहीं सूझा जो प्रतीकात्मक स्तर पर ही सही पर सभी या अधिकांश रचनाओं से एक जुड़ाव स्थापित कर सके। अतः यह तो लगभग तय था कि इस काव्य संकलन का नाम एक निर्विशिष्ट शब्द ही हो सकता है। मित्रों ने भी खूब मशक्कत की और कई सारे सुझाव सामने आए पर एक आम सहमति 'शब्दस्पर्शन' पर ही बन सकी।

मैं हमेशा यह प्रयास करता हूँ कि मैं अच्छी हिन्दी लिख व बोल सकूँ पर मैं यह नहीं कह सकता कि मेरी भाषा त्रुटिविहीन है। अतः इस संकलन में उपस्थित भाषायी त्रुटियों के लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ।

आप सभी का स्नेह प्राप्त हो इसी विश्वास के साथ मैं अपना यह प्रथम काव्य संकलन ईश्वर को, आप सब को और बाबा को समर्पित करता हूँ।

धन्यवाद!

अनुराग श्रीवास्तव 'मलय'
राजकोट, २३ जुलाई २०१९

अनुक्रमणिका

1.	कव्यौषधि	7
2.	काव्य सृजन की मनःस्थिति	8
3.	जिजीविषा	9
4.	विजय सूत्र	10
5.	मंगलगीत	11
6.	का चुप साधि रहेऊँ बलवाना!	12
7.	लुप्तप्राय मनुष्यत्व	13
8.	एक गधे की व्यथा	14-15
9.	बोध	16
10.	इस पार-उस पार	17
11.	परिवर्तन के स्वर	18-19
12.	चंद्रकलाएँ	20-21
13.	आधुनिक मनुष्य की ललकार	22
14.	प्रकृति की फटकार	23
15.	मौन शक्ति	24
16.	वास्तविक भारत	25-26
17.	अभिलाषा	27
18.	मेरा देशप्रेम	28
19.	मूल्य	29
20.	अमूल्य	30
21.	तुम और मैं	31
22.	लिखूँ कैसे?	32

काव्यौषधि

नीरसता के मेघों को पल में,
देखो! धूमिल करती हैं।
बोझिल जीवन को क्षण भर में,
रस से रंगों से भरती हैं।
इन कविताओं में मदिरा से,
सौ गुनी अधिक मादकता है।
ये एक बार जो छू जाएँ,
फिर भूले नहीं बिसरती हैं।

काव्य सृजन की मन:स्थिति

दृश्य कोई देख कर जब नीर दृग का रुक न पाए,
या सहज ही देख कर कुछ हास का एक ज्वार आए।

जब कभी अलगाव की पीड़ा हृदय को टीसती हो,
या मिलन का दिव्य अनुभव मन प्रफुल्लित करके जाए।

जब लगन के सामने दुर्भाग्य घुटने टेक देवे,
या परिस्थिति से पराजित मन कहीं भी टिक न पाए।

'ओज' का कवि 'रामधारी' जब 'कर्ण' सा पात्र पाए,
'दुख ही जीवन की कथा' जब यह 'निराला' मान जाए।

धार कविता की तभी बस फूट कर बरबस बहेगी,
पंक्तियों को पूर्णता का सहज ही आभास होगा।

तब मुखर होंगे ये अक्षर, व्याकरण वाचाल होंगे,
तब कलम की देह में सुरवंदिता का वास होगा।

जिजीविषा

ये हदें, दायरे, दहलीजें,

ये सब बेकार बहाना है,

जो जी में आए कर डालो,

कैसा रोना पछताना है?

खेलो, कूदो, नाचो, गाओ,

जब तलक हृदय विस्पंदित है,

यह क्षणभंगुर, नश्वर शरीर,

फिर मिट्टी में मिल जाना है।

विजय सूत्र

दुष्कर हो पथ का आचरण,
या फिर कठिन गंतव्य हो।
जी जान से बस जूझना,
हर व्यक्ति का कर्तव्य हो।

कितनी ही बाधाएँ पड़ें,
तम हो, भयंकर वृष्टि हो।
सारस सरीखा धैर्य हो,
बस श्येन की सी दृष्टि हो।

जब भी निराशा घेर ले,
मस्तिष्क में संयम रहे।
लघु क्षणिक सुख के समय भी,
अंतर में अनुशासन रहे।

सामर्थ्य का आभास हो,
तो काल भी भयभीत हो।
संघर्ष में विश्वास हो,
तो फिर सुनिश्चित जीत हो।

मंगलगीत

कालिमा को चीर करके,

ज्योत्सना लहरा रही है,

धूल के कण छंट गए हैं,

रश्मियां फिर आ रही हैं।

दुंदुभी के स्वर उठे हैं,

आज कोई शुभ दिवस है।

झूम करके हर दिशा,

जयघोष कोई गा रही है।

दुर्दिनों को भूल कर,

श्रृंगार में डूबी हुई है,

आज ये सारी धरा,

रस रागिनी बिखरा रही है।

कल तिमिर के कोप से सारा जगत भयभीत सा था,

आज सारी सृष्टि फिर से गीत मंगल गा रही है।

का चुप साधि रहेऊँ बलवाना !

उठ जाग जाओ हे मनुज! अनवरत तुम चलते रहो,
बस लक्ष्य को साधे हुए निर्भीक हो बढ़ते रहो।
बाधा जो आए मार्ग में, विचलित तनिक होना नहीं,
भयभीत हो व्यवधान से धीरज तनिक खोना नहीं।
है शक्ति तुममें सिंह सी, सामर्थ्य तुममें धरा सा,
है शौर्य तुममें वायु सा, रवि-तेज तुममें भरा सा,
तुम धैर्य पृथ्वी सा लिए, उन्मुक्त हो चलते रहो,
बस लक्ष्य को साधे हुए निर्भीक हो बढ़ते रहो।
तुममें है बल इतना कि कोई लक्ष्य दुर्लभ है नहीं,
वीरत्व इतना है कि नभ छूना भी दुष्कर है नहीं।
गिरि लांघ लो जो ठान लो, वह ओज तुममें व्याप्त है,
यमराज भी थर्रा उठे, वह तेज तुमको प्राप्त है।
हर विघ्न का सर काट कर मस्तक तिलक करते रहो,
बस लक्ष्य को साधे हुए निर्भीक हो बढ़ते रहो।
वीरत्व अपना घोल दो सम्पूर्ण वातावरण में,
वह लक्ष्य आएगा स्वयं चलकर तुम्हारी शरण में,
हर एक अपनी हार को तुम ढाल अपनी बनाकर,
सामर्थ्य रूपी रक्त से तलवार अपनी सजा कर,
अपनी असीमित शक्ति का आह्वान तुम करते रहो,
बस लक्ष्य को साधे हुए निर्भीक हो बढ़ते रहो।

लुप्तप्राय मनुष्यत्व

इस भूमि की पवित्र,

वो पहचान कहाँ है?

गीता, कुरान ग्रन्थों का,

ज्ञान कहाँ है?

वह धर्म कहाँ है?

वह ईमान कहाँ है?

देवत्व कहाँ है वह?

सम्मान कहाँ है?

वो राम, वो रहीम,

वो रहमान कहाँ है?

इंसानों की इस भीड़ में,

इंसान कहाँ है?

एक गधे की व्यथा

क्या-क्या न सहा है मैंने, कितने हैं बोझ उठाये।
कितनों की सेवा की है, कितनों के घाट चलाये।
कितनों की रोजी बनकर कितना ही वहन किया है,
कितनों का पेट भरा है, हर दुख को सहन किया है।
क्या यही मेरी किस्मत है? क्या यही मुकद्दर मेरा?
अपराध मात्र इतना है कि गधा नाम है मेरा?

जब से है जीवन पाया, हर रोज़ प्रताड़ा जाता,
हर रात के हर सपने को, हर सुबह उजाड़ा जाता,
कुछ सूखे तिनके देकर मैं लाद दिया जाता हूँ,
हर शाम को उस चौखट पर, मैं बांध दिया जाता हूँ।
पर्वत सा बोझा लेकर, पर्वत पे चढ़ाया जाता,
जो कभी रुका मैं थक-कर, कोड़ा बरसाया जाता,
क्या यह अन्याय नहीं है? यह नहीं है शोषण मेरा?
अपराध मात्र इतना है कि गधा नाम है मेरा?

मेरी किस्मत में किंचित, विश्राम भी नहीं लिखा है।
न कोई उत्सव मेरे, न कोई पर्व रखा है,
बस इतना सा जीवन है जीवन भर बोझ उठाना,
जब तक जीवन लदना है, अन्यथा मुझे मर जाना।
जीने की वजह है मेहनत, ऐसा जीवन है मेरा,
अपराध मात्र इतना है कि गधा नाम है मेरा?

रूखा सूखा खाता हूँ, अन्याय अनगिनत सहता,
पर सदा मौन रहता हूँ,मैं कभी नहीं कुछ कहता।
पर सहनशीलता मेरी कमजोरी कहलाती है।
यह स्वामिभक्ति भी मेरी कितना आदर पाती है?
विद्रोह नहीं करता हूँ ऐसा स्वभाव है मेरा।
अपराध मात्र इतना है कि गधा नाम है मेरा?

बोध

जीवन के इन सोपनों से,
दुख के बंजर मैदानों से,
चिंता की व्यग्र लकीरों से,
लाचारी की ज़ंजीरों से,
अब और अधिक टकराता हूँ,
कुछ और सीखता जाता हूँ।

बेखौफ समंदर की लहरों से,
मस्त पवन की चालों से,
ऋतुओं की इस मनमौजी से,
रवि के निष्पक्ष उजालों से,
अब और अधिक जुड़ पाता हूँ,
कुछ और सीखता जाता हूँ।

इस पार-उस पार

जब तक साँसों मे हरकत है,
बस तब तक ही चिंताएँ हैं।
है रक्त शिराओं में जब तक,
तब तक ही दुख दुविधाएँ हैं,
इस पार ही सारे झंझट हैं,
उस पार तो अपनी मस्ती है,
कुछ लोग बताया करते हैं,
वो बेफ़िक्रों की बस्ती है।
उस पार वक़्त की कमी नहीं,
रंगीनी है, कविताएं हैं,
जब तक साँसों मे हरकत है,
बस तब तक ही चिंताएँ हैं।

परिवर्तन के स्वर

यदि सपना है स्वर्णिम कल का, परिवर्तन तो लाना होगा।
इच्छा है नव आयामों की, पंखों को फड़फड़ाना होगा।
यह व्याप्त समाजों में विकार, यह धन की खातिर हाय! हाय!,
भुखमरी, गरीबी, त्रासदियाँ कुछ तो इनका होगा उपाय।
हाथों को अपने जगन्नाथ का रूप आप देना होगा,
खुद कठिन परिश्रम के बूते, अपना हिस्सा लेना होगा,
संकल्प स्वयं करना होगा, फिर स्वयं उसे पाना होगा,
यदि सपना है स्वर्णिम कल का, परिवर्तन तो लाना होगा।
यदि हम अपने ही स्तर पर कुछ श्रम करने का यत्न करें,
हम खुद पर ही विश्वास करें, कुछ नवनिर्माण प्रयत्न करें,
विश्वास दिलाता हूँ इतना कुछ तो रंगत यह लाएगा,
स्थितियाँ कुछ बदलेंगी, परिवर्तन के सुमन खिलाएगा,
तो उठो युवाओं, कमर कसो, कुछ करके दिखलाना होगा,
यदि सपना है स्वर्णिम कल का, परिवर्तन तो लाना होगा।
समुदायों की प्राचीरों को अब आग लगा कर भस्म करो,
इसके काले इतिहासों को युग-युग की खातिर दफ़्न करो,

हर हिन्दू को हर मुस्लिम के सुख-दुख में काम आना होगा,
हर वामन को हर एक दलित के थाल में ही खाना होगा,
इन जाति-धर्म के मुद्दों से उठकर ऊपर आना होगा,
दैवीय नहीं तो मानवीय ही, पर प्रयास करना होगा,
इस ऊंच-नीच की अब गहराती खाई को भरना होगा।
ऊर्जा का हो संचार नया कुछ ऐसा कर जाना होगा,
यदि सपना है स्वर्णिम कल का, परिवर्तन तो लाना होगा।

चंद्रकलाएँ

गगन के अंक में चंचल,
टिमकता मंद सा शीतल,
चला मिलने उषा से है,
बड़ा अनुराग में विह्वल।

अरे! कैसी ललक यह है?
रुके बिन भागता रहता,
वो मेघों से उलझता शशि,
कभी उज्ज्वल, कभी श्यामल।

लगी है चाँदनी पीछे,
निशा भी बाट जोहे है,
कभी छल से, कभी फिर प्रेम से,
चंदा को मोहे है।

मगर वो तो उषा से मिलन के सपने हृदय में भर,
चला चलता ठिठुरता-काँपता नन्हें कदम भर भर,

किसी की एक न सुनता,
जुनूँ में बढ़ रहा हर पल,

वो मेघों से उलझता शशि,
कभी उज्ज्वल, कभी श्यामल।

लगा जब प्रहर चौथा तब,
निशा थकने लगी मानो,
वो सारे मार्ग का अनुनय-विनय,
सब व्यर्थ ही जानो,
न डोला चाँद का अंतस,
निशा का धैर्य अब छूटा,
उषा के आगमन को देखकर,
उसका हृदय टूटा,
वो उल्टे पाँव अब लौटी,
विरह की अग्नि में प्रज्ज्वल,
निहारा दूर से शशि को,
पुकारा दूर से शशि को,
मगर वो अब कहाँ सुनता,
उषा के अंक में निश्चल,
अलक से अब उलझता शशि,
कभी उज्ज्वल, कभी श्यामल।

आधुनिक मनुष्य की ललकार

मैं मनुष्य हूँ! सृष्टि सृजक की अद्‌भुत रचना,
क्षिति, जल, पावक, गगन, वायु की हूँ संरचना,
है मुझमें सामर्थ्य प्रकृति को वश करने का,
मुक्त खगों की भांति मुक्त विचरण करने का,
लक्ष्य न कोई है अजेय मेरे समक्ष अब,
गिरिराजों को उखाड़ फेंक सकता हूँ जब तब।
प्रकृति के नियमों से है खेलना रुचियाँ मेरी,
निर्भीक, निरंकुश, ब्रह्माण्ड-विजेता कृतियाँ मेरी,
वसुंधरा पर एकछत्र साम्राज्य है मेरा,
पाताल है मेरा, चिर अनंत आकाश है मेरा।
ताण्डव से मेरे भीरु पूर्ण पृथ्वी हिलती है,
पवनों की दिशा बदलती, धारा उल्टी चलती है।
ये सूर्य, चन्द्र, तारे सारे जितने नक्षत्र हैं।
मैं हूँ इनका स्वामी ये सब मेरे सेवक हैं।
मैं ही हूँ सर्वशक्तिधारी, दुर्जेय हूँ मैं ही,
ये सारी सृष्टि पुजारी है औ पूज्य हूँ मैं ही।
ये धूप छांव सब होते हैं मेरी अनुमति से,
ओछा तिनका भी हिलता है मेरी सहमति से,
आतंक धरा पर है जिसका छाया वह मैं हूँ।
यह वन है मेरा एक मात्र इसका सिंह मैं हूँ।

प्रकृति की फटकार

हे मनुज! संभल जा अब भी यह अंतिम चेतावनी मेरी है,
है मुझसे ही अस्तित्व तेरा, मैं प्रकृति, तू कृति मेरी है।
यह जो तू स्वार्थ की सिद्धि हेतु करता फिरता मनमानी है,
परिणाम अत्यंत भयंकर हैं, कारण तेरी नादानी है।
यह तूने कैसे सोच लिया तू मुझ पर शासन कर लेगा?
मेरी गोदी में जन्मा तू मुझको ही बेबस कर देगा?
सुन ले मूरख! यह ध्यान में रख! यह तेरी भूल भयंकर है।
कुंठित है यह मस्तिष्क तेरा, है राख़ हुआ यह जल कर है।
मेरी प्रचंड शक्तियों की अब तक तुझको पहचान नहीं,
मेरे रौद्र रूप का सुन अब तक है तुझको भान नहीं।
यह प्रलय, काल, संकट, विनाश मेरी पर्यायवाचियाँ हैं।
अपने इन रूपों से प्रायः छलने की मेरी रुचियाँ हैं।
यदि रुष्ट किया तूने मुझको, सुन ले पीछे पछताएगा।
ताण्डव प्रारम्भ हुआ मेरा यदि, 'त्राहिमाम!' मच जाएगा।
है अब भी समय चेत जा तू अन्यथा न फिर होगा उपाय,
प्रलयों का फिर मंज़र होगा, नरजाति करेगी हाय! हाय!
मुझसे है तू, न मैं हूँ तुझसे, चेताना भर था कार्य मेरा।
परिणामों से तू अवगत है, अब कर जो कहे विवेक तेरा।

मौन शक्ति

कुछ भाव हृदय के होते हैं,
हम व्यक्त नहीं कर पाते हैं।
शब्दों में उन्हें पिरोने से,
वो अर्थहीन बन जाते हैं,
जब जब मनुष्य के अंतर में,
एक कुसुम प्रेम का खिलता है,
उद्गार हृदय के कहने में ,
लाचार शब्द पड़ जाते हैं।
फिर बिना एक भी हर्फ़ कहे,
संचार भाव का होता है,
वाक्यांश निरर्थक लगते हैं,
जब प्रेम परस्पर होता है।
तब मौन शक्ति सक्षम होकर,
पूरी करती अभिलाषा है,
शब्दों की तो सीमाएं हैं,
बस मौन प्रेम की भाषा है।

वास्तविक भारत

अनभिज्ञ शहर के कष्टों से, होकर सुदूर यह सजता है,
यह सच है असली भारत तो, बस गावों में ही बसता है।

वह दृश्य मनोहर प्रातः का, वह सूरज की स्वर्णिम किरणें,
वह कूँज कोकिला के स्वर की, नूतन किलोल करते झरने,
चौपायों का चारा खाना, कृषकों का खेतों में जाना,
स्वच्छंद उड़ान पंक्षियों की, मनचाहे सुर गुनगुनाना।

ऊर्जा अपूर्व सी लिए हुए वह खेत जोतना बैलों का,
हल की धारों से कट जाना कुछ चट्टानों का शैलों का,
हर्षित कर देता है तन-मन, झंकृत कर देता तार-तार,
छोटी सी नौका लिए हुए जाना नदियों के आर-पार।

यह चित्र मनोरम गावों का, जीवन खुल-खुल कर हँसता है,
यह सच है असली भारत तो, बस गावों में ही बसता है।

यौवन कुछ सावन से पाकर, वह खुद पर इठलाती फसलें,
कुछ गौ-माताएँ क्षीर-सिंधु, कुछ कामधेनु की भी नस्लें,
वह वृद्धों का जमघट लगना, वह रात्रिहीन रातें उनकी,
छल-छद्म, द्वेष से कहीं दूर, वह ज्ञान भरी बातें उनकी,

वह आदर अपने लोगों का, वह ममता उन माताओं की,
वह प्रेम परस्पर लोगों में, ना कुछ चिंता चिंताओं की,
वह सर्वधर्म समभाव जहां, मानव मानव में भेद नहीं,
यह तेरा है यह मेरा है, ऐसा भी कुछ मतभेद नहीं।

हर एक व्यक्ति के सुख-दुख में सब खुद को अर्पण किए हुए,
यदि हवा यहाँ पर बहती है तो कुछ अपनापन लिए हुए,
हो मंत्रमुग्ध इन बातों पर, बादल भी यहाँ बरसता है,
यह सच है असली भारत तो बस गावों में ही बसता है।

अभिलाषा

बेशक न मुझे शाहों जैसा,
या विप्रों सा माना जाए,
मैं नहीं चाहता मुझको,
धनवानों में पहचाना जाए,
ऐ जीवन! तुझसे तो मेरी,
बस इतनी सी अभिलाषा है,
जब चर्चे हों मुझको मेरी,
कविताओं से जाना जाए।

मेरा देशप्रेम

एक रोज़ पढ़ी मैंने इक पुस्तक, देशप्रेम पर लिखी हुई,
वीरों के बलिदानों की गाथाएँ थीं शब्दों में गुथीं हुईं,
पढ़ कर मैं तनिक अधीर हुआ, सोचा मुझको भी कुछ करना है,
भारत माता की खातिर अब तो सूली पर भी चढ़ना है।
फिर लगा सोचने मैं बैठा क्या कार्य अनोखा कर जाऊँ,
यदि उन वीरों की भांति नहीं तो कुछ कम ही कर दिखलाऊँ।
घण्टे दो घण्टे बीत गए पर सूझी ना कुछ करने की,
हो कष्टहीन और सुखदायी, यश ऐसा अर्जित करने की।
मौसम था बड़ा सुहाना सा मैं मस्त पवन से मचल गया,
निद्रा ने मारा ज़ोर और मैं स्वप्नलोक में पहुँच गया।
वह स्वप्नलोक था अति सुंदर, उपमानों से था भरा हुआ,
सुंदरियाँ नृत्य किया करतीं, मैं उपमानों से घिरा हुआ।
स्वर्ग सा जान पड़ा मुझको उस स्वप्नलोक का रंग-राग,
यह मेरा कैसा अहोभाग्य! यह मेरा कैसा अहोभाग्य!
उस स्वप्नलोक से निकला मैं जब निद्रा मेरी भंग हुई,
देखा मैंने वह देशप्रेम की पुस्तक नीचे पड़ी हुई,
सोचा मैंने अब देशप्रेम की बात को रहने देता हूँ,
हैं और वस्तुएँ अधिक रसिक उनका आलिंगन करता हूँ,
उस स्वप्नलोक का वह विलास भूले न अब तो बिसरता था,
और देशप्रेम का नशा मेरा कुछ हल्का मालूम पड़ता था।

मूल्य

मन में एक ज़िद सी बैठी है,
आखिर तक लड़ता जाऊंगा,
इन रीति-रिवाजों के झंझट को,
ताकत से ठुकराऊंगा।
कड़वी जुबान से, नफरत से,
मैं किंचित भी भयभीत नहीं,
पर प्रेम भरे दो शब्दों पर,
मैं बिना मोल बिक जाऊंगा।

अमूल्य

चांदी से कैसा मोह भला,
यह ऊंच-नीच समझाती है।
मुहरों का मोल नहीं कुछ भी,
आपस में भेद कराती हैं।
है कद्र मुझे तो दीपों की,
जो किरणें बांटा करते हैं,
मैं तो मुरीद हूँ मिट्टी का,
जो सबको गले लगाती है।

तुम और मैं

तुम अरुणिमा की प्रभा,
मैं अमावस की रात हूँ।
तुम शिखर की कीर्ति हो,
मैं विफलता की बात हूँ।
तुम प्रथम वर्षा से प्रफुल्लित कोंपलों का का हर्ष हो,
मैं प्रलय के परिणाम से पिछड़ा, अभागा वर्ष हूँ।
तुम सर्वजनप्रिय, सर्वविदित,
सर्वस्वगुणसम्पन्न हो,
मैं अनसुना, अनकहा हूँ,
गुमनाम सर्वविपन्न हूँ।

लिखूँ कैसे?

कि दिल ये जब-तलक तन्हाइयों में चैन पाता है,
मैं तक महफ़िलों की शान के चर्चे लिखूँ कैसे?

गरीबी, भुखमरी से जब तलक जानें निकलती हैं
मैं तब तक तख्त-ताजों की कहो शोहरत लिखूँ कैसे?

कमाई है हज़ारों में भवन पर हैं करोड़ों के,
कि इस दुर्भाग्य को मैं देश की बरकत लिखूँ कैसे?

हृदय पर राज करती है मेरे भाषा मोहब्बत की,
तो फ़िर अभिमान की या दंभ की ताक़त लिखूँ कैसे?

व्यक्तित्व दर्पण

नाम	**अनुराग श्रीवास्तव 'मलय'**
जन्म	०६.११.१९९२
शिक्षा	बी. एस. सी. (ऑनर्स) भौतिक विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय
निवास	ग्राम- बड़हरा, पोस्ट- पिपरपाती, जिला- देवरिया, उत्तर प्रदेश, पिन कोड- २७४००१
पत्राचार	मकान न. ६७, रंग उपवन सोसायटी, हनुमान मढ़ी चौक के पास, राजकोट, पिन कोड- ३६०००७
संपर्क नं.	९९१८१७२८८०
कार्य	कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) गुजरात, राजकोट में सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी के पद पर कार्यरत
प्रकाशन	अमर उजाला में ६ रचनाएँ प्रकाशित

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-051-3
मूल्य 60/-
शब्द सुगंध